Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

Original Article

दक्षिण-दक्षिण सहयोग

डॉ. रमेश राम सहा
प्राध्यापक (अतिथि व्याख्याता) राजनीति विज्ञान विभाग,
परिसर चंपावत, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय अल्मोड़ा (उत्तराखंड)
Email: aptech.ramesh1984@gmail.com

Manuscript ID:
JRD -2026-180233
ISSN: 2230-9578
Volume 18
Issue 2(A)
Pp. 168-172
February - 2026
Submitted: 18 Jan. 2026
Revised: 28 Jan. 2026
Accepted: 13 Feb. 2026
Published: 28 Feb. 2026

सार

आज विश्व आर्थिक रूप से दो भागों में बटा हुआ है। पहला उत्तर के देश जो उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित है। इस भौगोलिक तथ्य के कारण इन्हें उत्तर के विकसित देश कहा जाता है। दूसरा दक्षिण के देश जो दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थित है इन्हें विकासशील अर्थात् दक्षिण के गरीब देश कहा जाता है, इसलिए जब दक्षिण के विकासशील देश विभिन्न क्षेत्रों में आपसी सहयोग करते है, तो इसे दक्षिण-दक्षिण सहयोग कहा जाता है। इसके विपरीत जब उत्तर के विकसित देश एवं दक्षिण के विकासशील देशों के बीच सहयोग के लिए विचार-विमर्श होता है, तो इसे उत्तर-दक्षिण संवाद या सहयोग कहा जाता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विकासशील देशों के लिए 'दक्षिण' शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। 1945 के बाद समस्त विश्व राजनीतिक रूप से दो भागों में बट गया। दक्षिण के गरीब देश उत्तर के विकसित साम्राज्यवादी ताकतों के शोषण के शिकार होते जा रहे थे। जब दक्षिण के गरीब देशों ने स्वतंत्रता प्राप्त की तो दक्षिण के देशों ने अपने को आर्थिक पिछड़ेपन की समस्या से ग्रस्त पाया। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में भी उनके सामने आर्थिक साधनों की कमी आड़े आने लगी। ऐसी स्थिति में अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को अधिक प्रासंगिक बनाने के लिए दक्षिण के विकासशील देशों ने नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था (नियो) की स्थापना के लिए उत्तर के अमीर देशों से उदार रवैया अपनाने का आग्रह किया, तो परिणामस्वरूप उत्तर-दक्षिण सहयोग के प्रयास शुरू होने लगे, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात कि लंबे समय तक कोई सकारात्मक परिणाम न निकले ऐसी स्थिति में विकासशील देशों ने विकसित देशों के साथ सहयोग के बजाए आपसी सहयोग अर्थात् दक्षिण-दक्षिण सहयोग की शुरूआत की। इन्ही के आपसी विचार-विमर्श से दक्षिण-दक्षिण सहयोग का जन्म हुआ। दक्षिण के गरीब देशों को दक्षिण-दक्षिण सहयोग की प्रक्रिया द्वारा आत्मनिर्भर बनाने एवं विकसित देशों पर निर्भरता कम करने की प्रक्रिया को ही दक्षिण-दक्षिण सहयोग के नाम से जाना जाता है। इसी प्रक्रिया के परिणामस्वरूप विकासशील देशों में सहयोग के एक नए युग का सूत्रपात हुआ।

कूट शब्द - *दक्षिण-दक्षिण, विकासशील, अर्थव्यवस्था, सहयोग, विकास।*

प्रस्तावना

आज विश्व आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र के दो भागों में बँटा हुआ है। ये दो भाग उत्तर और दक्षिण हैं। यहाँ 'उत्तर' अमीर राष्ट्रों का प्रतीक है तथा दक्षिण से आशय गरीब अथवा विकासशील राष्ट्रों से है। 'दक्षिण-दक्षिण संवाद' या 'दक्षिण-दक्षिण सहयोग' यह संकेत देता है कि विकासशील अथवा गरीब राष्ट्रों को उत्तरी गोलार्द्ध के विकसित एवं धनवान राष्ट्रों पर अपने आर्थिक विकास के लिए निर्भर न रहकर, विकासशील राष्ट्रों में आपस में ही आर्थिक सहयोग के लिए इस प्रकार के प्रयत्न करने चाहिए, जिससे कि वे आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ सकें।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.

Address for correspondence:
डॉ. रमेश राम सहा, प्राध्यापक (अतिथि व्याख्याता) राजनीति विज्ञान विभाग, परिसर चंपावत, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

How to cite this article:
सहा, . रमेश . राम . (2026). दक्षिण-दक्षिण सहयोग. Journal of Research & Development, 18(2(A)), 168–172. https://doi.org/10.5281/zenodo.18934920

Quick Response Code:
Website: https://jrdrvb.org/
DOI: 10.5281/zenodo.18934920
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

दक्षिणी गोलार्द्ध में विकासशील राष्ट्रों के बीच निरंतर बनी रहने वाली मंदी की स्थिति, गरीबी की हालत और पिछड़ापन, उत्तर-दक्षिण संवाद में गतिरोध की स्थिति एवं विश्व-स्तर की आर्थिक संस्थाओं की अकर्मण्यता ने विकासशील एवं गरीब राष्ट्रों के लिए 'दक्षिण-दक्षिण सहयोग' अथवा 'दक्षिण-दक्षिण संवाद' का नारा बुलंद करने के लिए मजबूर कर दिया। इसका प्रमुख कारण की विकसित और विकासशील देशों में विषमता की रेखा बढ़ती चली गई। विकसित देशों ने विकासशील देशों के बाजारों पर अपनी जड़ें जमा ली। आर्थिक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप विकसित देश विकासशील देशों का शोषण करने लगे। परिणामस्वरूप विकासशील देशों ने नवीन अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग की। नवीन अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता के साथ उत्तर-दक्षिण विवाद शुरू हुआ तथा वहीं से दक्षिण-दक्षिण सहयोग की आवश्यक हुई।

दक्षिण-दक्षिण सहयोग की पृष्ठभूमि

दक्षिण-दक्षिण सहयोग का सूत्रपात 1968 में नई दिल्ली में आयोजित द्वितीय अंकटाड के सम्मेलन में विकासशील राष्ट्रों में आपसी सहयोग की आवश्यकता पर बल देने के साथ शुरू हुआ था। इसके पश्चात् 1970 के लुसाका सम्मेलन में दक्षिण-दक्षिण सहयोग की अवधारणा पर विचार-विमर्श हुआ। संयुक्त राष्ट्रसंघ की महासभा ने 1974 में जब 'नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था' का आह्वान किया तो उसमें विकासशील राष्ट्रों के आपसी सहयोग का विशेष रूप से उल्लेख किया गया था। इसके पश्चात् लीमा में 1975 में हुए विदेश मंत्रियों के सम्मेलन 1976 में हुए गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के सम्मेलन में एवं 1976 के **चैथे अंकटाड** सम्मेलन में भी विकासशील राष्ट्रों के बीच आपसी व्यापार की वृद्धि की आवश्यकता और सामूहिक आत्मनिर्भरता की आवश्यकता पर जोर दिया गया। मई 1981 के कराकास में विकासशील राष्ट्रों के बीच आर्थिक सहयोग पर हुई उच्चस्तरीय बैठक में विकासशील राष्ट्रों के बीच विश्वव्यापी प्रणाली की माँग की गई, जिससे की व्यापार संवर्धन में वृद्धि हो सके।

1981 में नई दिल्ली में 44 राष्ट्रों का एक सम्मेलन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने किया। इस सम्मेलन ने दक्षिण-दक्षिण सहयोग के लिए मजबूती से आह्वाहन किया गया। 'उत्तर' (पश्चिम के धनी राष्ट्रों) पर कम निर्भर रहने की दृष्टि से ही तथा दक्षिण-दक्षिण में परस्पर सहयोग स्थापित करने के लिए इस सम्मेलन का आयोजन किया गया था। इस सम्मेलन में धनी राष्ट्र भी आमंत्रित किए गए थे। इन राष्ट्रों से यह आशा की गई कि ये राष्ट्र अपने गरीब भाइयों की सहायता के लिए आगे आवेंगे। यदि तेल सम्पन्न राष्ट्र अपने धन को विकासशील राष्ट्रों में लगाने के लिए तैयार हो जाएं तो निश्चित रूप से 'दक्षिण' के निर्धन और विकासशील राष्ट्रों का आर्थिक नक्शा बदल सकता है। अक्टूबर, 1982 में 'ग्रुप-77' के राष्ट्रों के मंत्रियों ने न्यूयार्क में एक घोषणा स्वीकार करके विकासशील राष्ट्रों के बीच आपसी व्यापार अधिमानों एवं दीर्घकालीन समझौतों जैसे प्रत्यक्ष उपायों को अपनाकर उनके आपस के व्यापार में वृद्धि करना था। 1986 में गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के हरारे शिखर सम्मेलन में 'उत्तर-दक्षिण सहयोग' के स्थान पर 'दक्षिण-दक्षिण सहयोग' की रूप से कहा था कि 'दक्षिण-दक्षिण सहयोग और सामूहिक आत्मनिर्भरता को अपनाए बिना अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में सुधार लाना संभव नहीं होगा। 'दक्षिण-दक्षिण सहयोग' को गति देने के लिए विकासशील राष्ट्रों के वित्त मंत्रियों की बैठक उत्तर कोरिया में आयोजित करने का निर्णय किया गया। वर्ष 1987 में ही 'दक्षिण आयोग' का गठन किया गया। इसका उद्देश्य विकासशील राष्ट्रों के आपसी सहयोग के लिए नई दिशा एवं गति देना था। दिसम्बर 1991 में काराकास सम्मेलन आयोजित किये गये जी-15 के राष्ट्रों ने विकासशील राष्ट्रों के नेताओं में उनकी आपसी समस्याओं के प्रति जागरुकता पैदा की। कराकास सम्मेलन में भारत के प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने ठीक ही कहा था, 'निर्धन राष्ट्रों के आपसी सहयोग को चहुमुखी विकास का प्रभावी माध्यम बनाया जाना चाहिए।'

आज दक्षिण का उदय अभूतपूर्व गति और स्तर पर हुआ है। उदाहरण के लिए एक-एक मिलियन से ज्यादा जनसंख्या वाले चीन और भारत का आर्थिक उत्थान, जिसके कारण 20 वर्ष से कम समय में प्रति व्यक्ति निर्गत दुगना हो गया, ऐसा आर्थिक बल जिसने औद्योगिक क्रांति मे ज्यादा बड़ी जनसंख्या को प्रभावित किया। वर्ष 2050 तक भारत, चीन, ब्राजील तीनों मिलकर क्रयशक्ति समता के अर्थों में विश्व के सकल निर्गत के 40 प्रतिशत हिस्सेदार होंगे।

वर्तमान में कुल वैश्विक आर्थिक निर्गत में दक्षिण की हिस्सेदारी लगभग आधी है, जो 1990 के एक-तिहाई के मुकाबले काफी अधिक है। आठ प्रमुख विकासशील देशों-अर्जेण्टीना, ब्राजील, चीन भारत, इण्डोनेशिया, दक्षिण अफ्रीका मैक्सिको और तुर्की का कुल सकल घरेलू उत्पादन अब अमेरिका के सकल घरेलू उत्पादन के लगभग बराबर हो चुका है, जो अभी विश्व की सबसे बड़ी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था है।

दक्षिण दक्षिण सहयोग का अर्थ से तात्पर्य विकासशील देशों में आपसी सहयोग को बढ़ावा देना तथा आर्थिक व तकनीकी आत्मनिर्भरता प्राप्त करना है। विकासशील अल्प देशी को 'दक्षिण' के देश कहा जाता है, क्योंकि इनमें से अधिकांश देश दक्षिण में स्थित है।

'दक्षिण-दक्षिण सहयोग' से तात्पर्य है दक्षिण-दक्षिण अर्थात् विकासशील देशों के मध्य आर्थिक सहयोग के लिए विचार-विमर्श एवं आपसी सहयोग के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की स्थापना के लिए प्रबल प्रयास किए गए थे, किन्तु धनी विकसित देशों की हठधर्मिता एवं अड़ियल रुख के कारण कोई उत्साहजनक परिणाम नहीं निकले और विकासशील देशों की निर्धनता बढ़ती गयी,

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

ऋणभार बढ़ता गया, बजट घाटा बढ़ता गया और व्यापार में असन्तुलन बना रहा। उत्तर-दक्षिण सहयोग की मृग मरीचिका के पीछे भागने के बजाय दक्षिण गोलार्द्ध के विकासशील राष्ट्रों ने अपने त्वरित आर्थिक विकास के लिए दक्षिण-दक्षिण आपसी सहयोग पर जोर देना प्रारम्भ कर दिया।

दक्षिण-दक्षिण सहयोग

दक्षिण-दक्षिण सहयोग का संबंध दक्षिणी देशों के बीच सहयोगी की भावनागत प्रक्रियाओं से है। ऐसी प्रक्रियाओं में पारस्परिक तकनीकों, सेवाओं और व्यापारिक संबंधों का विकास से संबधित सहयोग शामिल है। दक्षिण-दक्षिण सहयोग का उद्देश्य दक्षिण के राष्ट्रों के बीच आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना तथा उन राज्यों के बीच आर्थिक संबंधों को मजबूत करना है, जिनकी बाजार शक्ति का विकास हो।

दक्षिण-दक्षिण सहयोग अफ्रीका, दक्षिणी एशिया और दक्षिण अमेरिका की आर्थिक उन्नति में योग देता है। अप्रैल 2000 में चैथा दक्षिण सम्मेलन हवाना में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन ने 2003 की मर्राकश संरचना का आधार तय किया जिसमें सहयोगी देशों के लिए दीर्घकालिक रणनीतियां तैयार की गई। विशेषतः भूख को समाप्त करने तथा ऋण राहत, पर्यावरण पर्यटन एवं पोषणकारिता के लिए सहायता कार्यक्रमों की जरूरत पर जोर दिया गया। दूसरा सम्मेलन दोहा में 2005 में आयोजित किया गया। इसके अलावा इन कार्य की मॉनिटरिंग के लिए अन्य सभाएं भी आयोजित की गई।

सभी संयुक्त राष्ट्र एजेंसियों व अन्य बहुआयामी संगठनों के कार्यक्रमों में दक्षिण-दक्षिण सहयोग को शामिल किए जाने का आग्रह किया।

दक्षिण-दक्षिण सहयोग की मौलिक प्रक्रियाएं स्वरूप में आर्थिक हैं। चीन, भारत, ब्राजील और मिस्र ने दोहनीय प्राकृतिक संसाधन जैसे क्षेत्रों में निवेश किया है। चीन ने अफ्रीकी राज्यों को 10 अरब डॉलर का ऋण नामंजूर कर दिया और तेल अन्वेषण एवं टिंबर विकास में भारी रूप से निवेश किया।

चीन ने ऐसी ही भागीदारी लैटिन अमेरिका में की है जहां उसने प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से जुड़ी इन्फ्रास्ट्रक्चर परियोजनाओं में निवेश किया है। अन्य देशों के निवेश कार्य इस प्रकार हैं-

1. भारत ने मोजाम्बिक में कृषि अभिक्रमों तथा पश्चिमी अफ्रीका में जैव ईंधन विकास में निवेश किया है।

2. मिस्र तंजानिया के साथ सिंचाई परियोजनाओं में सहयोग कर रहा है।

3. जापान ने अफ्रीकी अभिक्रमों में निवेश किया है जैसे कि कृषि निवेश कार्यक्रम, न्यू राईस फॉर अफ्रीकी तथा माइक्रो-एंटरप्राइस डेवलपमेंट। जापान के अन्य कार्यों में शामिल हैं-कंबोडिया में खाद्य उत्पादन के लिए तकनीकी सहायता, मलेशिया में खाद्य उत्पादन के लिए तकनीकी सहायता, मलेशिया में पर्यावरणीय प्रबंधन तथा उत्तरी अफ्रीका एवं मध्य पूर्व में जल प्रबंधन परियोजनाएं आदि।

4. दक्षिण अफ्रीका कांगो में बिजली प्रदान करने वाले इंगा बांध में साझेदारी कर रहा है।

5. ब्राजील ने मोजांबिक में जैव विविधता परियोजनाओं में सहायता की है। इतना ही नहीं यह चीनी और लकड़ी जैसी नवीनीकृत फसलों के प्रोत्साहन के लिए विभिन्न विकासशील देशों में जैव ईंधन तकनीकी तथा लैटिन अमेरिका में एचआईवी एड्स राहत कार्य में भी सहयोग कर रहा है।

दक्षिण-दक्षिण संवाद के माध्यम से विकासशील देश निओ की स्थापना का प्रयास कर रहे हैं। विकासशील देशों का मत है। दक्षिण-दक्षिण संवाद के माध्यम से आपसी एकता और सहयोग में वृद्धि कर विकसित देशों पर अपनी निर्भरता कम कर सकते हैं।

संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन की स्थापना दक्षिण-दक्षिण संवाद के लिए वर्ष 1964 में हुई। अंकटाड का मूल उद्देश्य दक्षिण-दक्षिण सहयोग को बढ़ाकर विकसित देशों पर निर्भरता कम करना है।

दक्षिण-दक्षिण सहयोग का एक प्रमुख संगठन गुटनिरपेक्ष आंदोलन है। नैम का मूल उद्देश्य विकासशील देशों की स्वतन्त्रता व हितों की रक्षा करना है। नैम के अल्जीयर्स सम्मेलन (1973) में ही सर्वप्रथम नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना का लक्ष्य रखा गया था। नैम के प्रयासों से ही वर्ष 1974 में नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को नियो में रखा गया। आज के वैश्वीकरण के युग में नैम का प्रमुख लक्ष्य नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना करना है। नैम के 14 वे हवाना शिखर सम्मेलन (2006) में नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना के लिए दक्षिण-दक्षिण सहयोग को मजबूत करने का आह्वान किया गया।

आसियान के माध्यम से भी दक्षिण-पूर्व एशियाई राष्ट्रों ने अपने आर्थिक विकास में काफी वृद्धि की है। वस्तुतः आसियान पूरे विश्व का ऐसा क्षेत्रीय आर्थिक संगठन बन चुका हैं, जो विश्व का आकर्षण केंद्र बना हुआ है। आज जापान, चीन जैसे राष्ट्र आसियान के साथ आसियान 3 प्रारूप के तहत शिखर बैठक आयोजित कर रहे है, जबकि भारत 'आसियान +1 प्रारूप के तहत इसके अतिरिक्त यूरोपीय संघ भी आसियान के साथ सहयोग हेतु शिखर बैठक आयोजित कर रहा है।

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन अर्थात् 'सार्क' भी भारत, पाक आदि आठ देशों का प्रमुख क्षेत्रीय सहयोग संगठन है, जो दक्षिण एशिया के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए कार्य कर रहा है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के दोनों पहलू उत्तर-दक्षिण सहयोग दक्षिण-दक्षिण सहयोग, वास्तविक प्रगति नहीं कर पाए हैं। वस्तुतः न्याय व समानता पर आधारित नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था न केवल विकासशील देशों के लिए लाभकारी है अपितु विकसित देशों के लिए भी लाभकारी है। अंततः नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए विकासशील देशों के साथ-साथ विकसित देशों को भी प्रयास करना चाहिए।

दक्षिण-दक्षिण सहयोग की सीमाएँ तथा चुनौतियाँ

तीसरे विश्व अथवा दक्षिण के गरीब राष्ट्रों के पास अपार प्राकृतिक संपदा है। इस संपदा के होने से विकसित राष्ट्रों को कच्चे माल की आपूर्ति करने के बारे में इनकी कई प्रकार की इजारेदारी है, जिसके कारण औद्योगिक अथवा विकसित राष्ट्र अपनी जरूरत को पूरी करने के लिए इन पर निर्भर हैं। यदि कच्चे माल की आपूर्ति, मूल्य निर्धारण तथा वितरण के बारे में दक्षिण के राष्ट्र प्रभावशाली नियंत्रण की नीति अपनाकर अमल में लाते हैं, तो यह स्वाभाविक है कि विकसित अथवा अमीर राष्ट्र अपने आप उनकी आवश्यकताओं और आकाँक्षाओं को समझने के लिए मजबूर होंगे और परिणामस्वरूप उत्तर के विकसित राष्ट्रों के साथ सौदा करने में दक्षिण के विकासशील राष्ट्रों की स्थिति मजबूत होगी।

तेल उत्पादक अरब राष्ट्रों ने पिछले कुछ वर्षों से विश्व की बड़ी शक्तियों के सामने अपनी एकता दिखा करके यह सिद्ध कर दिया है कि कुशल संगठन एवं एकजुटता से क्या-क्या प्राप्त किया जा सकता है। पिछले कुछ समय से भारत तथा विश्व के कुछ अन्य राष्ट्रों ने कृषि के क्षेत्र में विकसित तकनीक अपनाकर अपने खाद्य उत्पादन में अनवरत वृद्धि की है जिसके कारण इन राष्ट्रों की खाद्य सामग्री की दृष्टि से पश्चिमी राष्ट्रों पर निर्भरता में महत्त्वपूर्ण रूप से कमी आई है। इसी प्रकार टेक्नोलॉजी के मामले में भारत तथा कुछ अन्य राष्ट्रों ने उल्लेखनीय प्रगति की है, जिसके परिणामस्वरूप ये राष्ट्र अपने साथी पिछड़े हुए राष्ट्रों को तकनीकी मदद देने की स्थिति में आ गए हैं। कुछ समय पहले जाम्बिया के राष्ट्रपति कैनथ कौण्डा ने अफ्रीकी राष्ट्रों को सलाह दी थी कि उन्हें नव उपनिवेशवादी शक्तियों के स्थान पर भारत से टेक्नोलॉजी के मामले में मदद लेनी चाहिए। भारत के सहयोग से अफ्रीका के कई राष्ट्रों में इस्पात, सीमेंट, कपड़ा उद्योग के कारखाने लगाने का कार्य विकासशील राष्ट्रों के प्रति उसके सहयोगपूर्ण एवं सौहार्द्रपूर्ण रुख को इंगित करता है।

भारत अपने स्वतंत्र तकनीकी ज्ञान से लीबिया में अंतर्राष्ट्रीय स्तर का हवाई अड्डा बना चुका है। इसी प्रकार से ईरान में भारतीय तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग एक पाँच हजार मीटर गहरे तेल कुएँ की खुदाई में कार्यरत है। इतना सब-कुछ होने के उपरांत भी दक्षिण-दक्षिण सहयोग के मार्ग में अनेक रुकावटें तथा चुनौतियाँ हैं। दक्षिण के विकासशील राष्ट्रों के बीच आपसी मतभेद तथा प्रतिद्वन्द्विता मौजूद है। इसी प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् जितने अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष हुए हैं, वे सभी विकासशील राष्ट्रों के बीच में हुए हैं। इनमें भारत-चीन युद्ध, भारत-पाकिस्तान युद्ध, ईरान-इराक युद्ध तथा कुवैत पर इराकी कब्जा मुख्य हैं। आर्थिक मामलों में भी दक्षिण के विकासशील राष्ट्रों के बीच सहयोग का अभाव है। तीसरे विश्व के अनेक राष्ट्रों के पास, विशेष रूप से तेल के निर्यातक राष्ट्रों के पास काफी अधिक मात्रा में अधिशेष धन है, लेकिन वे इस धन को अन्य विकासशील राष्ट्रों में निवेश करने के स्थान पर पश्चिम के बैंकों में अथवा विकसित राष्ट्रों में विनियोजित करते हैं। इन सभी कारणों से विकासशील राष्ट्रों के बीच सहयोग अत्यंत ही सतही अथवा बाहरी स्वरूप धारण कर पाया है। वे अपने को उत्तर के विकसित और धनी राष्ट्रों के साथ सौदा करने की स्थिति में कमजोर पाते हैं। इस प्रकार की चुनौतियों के कारण यह आवश्यक है कि दक्षिणी गोलार्द्ध के विकसित राष्ट्र एकजुट हों तथा शीत युद्ध की समाप्ति के बाद के युग में उत्तर के सम्पन्न राष्ट्रों की बढ़ती आर्थिक तथा राजनीतिक प्रभुता के विरुद्ध खड़े हों। इसी कारण से 'दक्षिण आयोग' व 'जी-15' के राष्ट्रों के संगठन स्थापित किए गए हैं। इन संगठनों का उद्देश्य विकासशील राष्ट्रों में सहयोग को प्रोत्साहन देकर उनको आत्मनिर्भर बनने की दिशा में आगे बढ़ाना है। इस प्रकार भारत ने दक्षिण-दक्षिण सहयोग में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। यथा-

भारत व दक्षिण-दक्षिण सहयोग

आरम्भ से ही दक्षिण-दक्षिण सहयोग भारत की विदेश नीति का एक अंग रहा है। भारत ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन के माध्यम से दक्षिण-दक्षिण सहयोग की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने का प्रयास किया है। भारत द्वारा गरीब देशों के साथ तकनीकी सहयोग को प्रोत्साहित करने के लिए आइटेक नामक कार्यक्रम की शुरूआत की गई थी। इस कार्यक्रम के अंतर्गत आर्थिक व तकनीकी सहयोग की कई योजनाएँ संचालित हैं।

संक्षेप में दक्षिण-दक्षिण सहयोग की दिशा में भारत के प्रयासों को निम्नलिखित रूप में समझ सकते हैं-

बहुपक्षीय आधार पर भारत ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन के माध्यम से दक्षिण-दक्षिण सहयोग को प्रोत्साहित किया है। 1974 में घोषित नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के क्रियान्वयन हेतु भारत ने दक्षिण-दक्षिण सहयोग को बढ़ावा दिया है। इसके अतिरिक्त दक्षिण-दक्षिण सहयोग के अन्य मंचों जैसे जी-77 व अंकटाड में भारत की भूमिका सदैव प्रभावशाली रही है। वर्तमान में भारत दक्षिण-दक्षिण सहयोग के नए मंच 'इब्सा' का एक सक्रिय सदस्य है।

द्विपक्षीय आधार पर भारत ने दक्षिण-दक्षिण सहयोग हेतु निम्नलिखित महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं-

पहला 1964 में 'आइटेक' कार्यक्रम की शुरूआत जिसका उद्देश्य विकासशील देशों व भारत के मध्य आर्थिक व तकनीकी सहयोग को बढ़ाना है। भारत अफ्रीकी देशों के प्रमुख विकास कार्यक्रम नेपाड के क्रियान्वयन में भी भागीदारी कर रहा है।

Journal of Research and Development
A Multidisciplinary International Level Referred and Double Blind Peer Reviewed, Open Access
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-18, Issue-2(A)| February - 2026

दूसरा भारत वर्तमान में गरीब देशों को विकास सहायता प्रदान करने वाला देश बन गया है। भारत गरीब देशों के लिए सस्ते ऋण की सुविधा प्रदान करता है।

तीसरा भारत ने विश्व के 48 अल्पविकसित देशों के लिए विशेष कार्यक्रम घोषित किया है, जिसके अंतर्गत इन देशों के निर्यात का भारत में शुल्क मुक्त प्रवेश, सस्ती ऋण सुविधा व विकास सहायता आदि प्रमुख रूप से शामिल हैं।

चौथा दक्षिण-दक्षिण सहयोग की दृष्टि से भारत द्वारा दक्षिण एशिया व अफ्रीका में चलाए जा रहे मानव संसाधन विकास कार्यक्रम अत्यधिक महत्वपूर्ण व लोकप्रिय हैं। इससे गरीब देशों में मानव पूँजी के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

निष्कर्ष

दक्षिण-दक्षिण सहयोग विकासशील देशों के लिए एक महत्वपूर्ण अवसर है। ये अपने विकास में चुनौतियों का सावधानीपूर्वक समाधान करें और साझा लक्ष्यों को प्राप्त करें। दक्षिण के देशों को दक्षिण-दक्षिण सहयोग को बढ़ावा देने एवं उसके आपसी सत्त विकास के लिए मिलकर काम करने की आवश्यकता है। दक्षिण के देश अपने विकास के लिए अनुभवों को दूसरे के साझा कर सकते हैं। जहां तक भारत का प्रश्न है भारत वर्तमान में दक्षिण-दक्षिण सहयोग के क्षेत्र में द्विपक्षीय व बहुपक्षीय आधार पर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। दक्षिण-दक्षिण सहयोग भारत की आर्थिक कूटनीति का अहम् हिस्सा है।

संदर्भ

1. डॉ. शर्मा प्रभुदत्त, अंतरर्राष्ट्रीय राजनीति, पृ.480-481
2. डॉ. फड़िया एल.बी., अंतरर्राष्ट्रीय संबंध, पृ.566
3. बिस्वाल तपन, अंतरराष्ट्रीय संबंध, पृ.291-292
4. शर्मा डी.ए. राजनीति विज्ञान, अरिहंत, पृ.98-99
5. डॉ. शर्मा प्रभुदत्त, पृ.486-487
6. डॉ. सिंहल सी. एस., समकालीन राजनीतिक मुद्दे, पृ.97
7. शर्मा दत्त अरूण, राजनीति विज्ञान, अरिहंत, पृ.317